मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

अमित कुमार दवे*
पूनम दवे**

श्रीकान्त वर्मा के अनुसार- 'इतने मकान पास-पास सटे, मगर प्रेम नहीं। सुबह इन मांदों का खुलना, शाम को धीरे-धीरे बन्द होना, दिन भर आंय-आंय, यह अर्थ नहीं है भांय-भांय, सहमति नहीं, विश्वास नहीं, एक-दूसरे से मिलने की ललक नहीं।।' मानवजन में व्याप्त इस भावना के समूलोत्सर्ग करने की दृष्टि से आज मूल्य शिक्षा की महती आवश्यकता है। 'विवेकानन्द जी' के शब्दों में- "विदेशी भाषा में दूसरों के विचार रटकर अपने मस्तिष्क में उन्हें ठूंसकर और विश्वविद्यालयों की कुछ पदवी प्राप्त करके हम अपने को शिक्षित समझते हैं? क्या यही शिक्षा है? हमारी शिक्षा का उद्देश्य क्या है? या तो मुंशीगिरी करना, वकालत करना या छोटा-मोटा अफसर हो जाना। किन्तु इससे हमें या हमारे देश को क्या लाभ?"[1] वह शिक्षा जो जन समुदाय को जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बनाती, चारित्रय शक्ति का विकास नहीं करती, जो उनमें दया का भाव जागृत नहीं करती, क्या उसे हम शिक्षा का नाम दे सकते हैं? नहीं। हमें तो ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र बने, मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और जिससे मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके। आज आधुनिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत विद्यार्थियों में सच्ची जिज्ञासा एवं श्रद्धा के भाव शायद दिखाई देते हैं और हां कुछ मेधावी छात्र ज्ञानार्जन कर लेते हैं, किन्तु मस्तिष्क तो कोरा ही रहता है, विवेक नहीं, संस्कार नहीं, कोरी अर्थोपार्जक एवं भौतिकता हेतु प्रस्तुत करने वाली शिक्षा से कुछ नहीं होगा, यदि आज सही मायनों में राष्ट्र के नागरिकों एवं युवाओं को चरित्रवान, मानसिक शक्तियुक्त, सक्षम जीवन जीने हेतु तैयार करना है तो मूल्य शिक्षा देने की नितान्त आवश्यकता ही नहीं अपितु अनिवार्यता है।

* *सहायक आचार्य*, शिक्षा संकाय (लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय) सी.टी.ई., डबोक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

** *प्राध्यापिका*, विद्याभवन कला संस्थान बी.एस.टी.सी. महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सत्याचार-विचारशिक्षण परा सर्वांगिकीमुन्नतिम्,
छात्राणां विदधाद् विवेकविनयाचार प्रचारैकधी:।।
चारित्रयोन्नतिसाधिकां गुणगणै: सारल्य संसाधिका,
लोकेषु प्रचरेत सुशिष्यजनिदा, शिक्षा सदा कामधुक।।[2]

उक्त काव्य खण्डानुसार आज हम देखें कि शिक्षा का स्वरूप कैसा हो गया है? क्या पूर्व की तरह आज की शिक्षा मूल्यों का पोषण करती नजर आ रही है, नहीं। तो क्यों?

इसका सरल-सा जवाब है आज की शिक्षा व्यक्ति में संस्कारों, आदर्शों तथा मूल्यों की जगह किसी चीज का सर्वांगीण विकास कर रही है तो वह केवल निरी व्यावसायिकता का आवरण चढ़ाए भौतिकवादी दृष्टिकोण एवं भैतिकता प्रियमानव देह का। क्या भौतिक सृष्टि के अन्धानुकरण में जीवन की उत्कृष्टता का, जीवन की सुन्दरता का, जीवन की सरसता का, जीवन की प्रासंगिकता का, जीवन की विशिष्टता का आभास हो जाएगा? नहीं! तो जीवन की सार्थकता कब है? तो उत्तर है– मूल्ययुक्त विकासशील संयमित जीवन से ही जीवन की सार्थकता है। किन्तु मूल्ययुक्त विकासशील जीवन का निर्माण कैसे हो सकता है?

आज देश के लिए अत्यन्त दु:ख का विषय है कि पूर्व में जब शिशु जन्म लेता था तभी से उसकी रगों में समयानुसार अपने-आप मूल्यों का लहू बहने लगता था किन्तु आज बच्चा कुछ सीखने की स्थिति में आता है तो वह, सीखता हुआ बड़ा होता है अथवा अन्य सामान्य विकल्पों के साथ कुछ खेल खेलना चाहे तो घर में ही एकाकी खेल खेलता है, वीडियो गेम अथवा कम्प्यूटर पर खेलता है तो किस प्रकार उसमें मित्रता, बन्धुत्वता, सहयोग, प्रेम, सदाचार, व्यवहार, नैतिकता आदि मूल्यों का विकास हो सकेगा? तत्पश्चात् बालक पर केवल अध्ययन का भार आ जाता है जो केवल उन्नत व्यावासायिक दक्षता के साथ भौतिकवादी व्यक्ति का ही निर्माण करने में सफल होता है। यह सर्वथा राष्ट्र के भविष्य के साथ अन्याय है। क्योंकि आज का शिशु/बालक/छात्र कल का शिक्षक, नेता, व्यापारी, समाज सुधारक, साहित्यकार, दार्शनिक, धर्मगुरु, समाज का अंग, संस्थापक है। उस बालक में विवेक, सहृदयता, ईमानदारी, कर्त्तव्यपरायणता, सहिष्णुता, अहिंसा, सत्संग, धैर्यता आदि मूल्यों के विकास हेतु माध्यमिक स्तर से अथवा कुछ नीचे के शैक्षणिक स्तर से मूल्य शिक्षा का प्रावधान ही झकझोर देने वाला है।

जिस राष्ट्र के जल-थल-नभ में कभी नित मूल्यों, संस्कारों, आदर्शों का ही साम्राज्य हुआ करता था, जिस राष्ट्र की पहचान ही वहां के ज्ञान, आदर्शों एवं मूल्यों से हुआ करती थी, उसी राष्ट्र की संस्कृति को, उसकी पूरी वैशिष्टयता को पुन: जीवित करने हेतु विद्यालय/कॉलेज स्तर पर मूल्य शिक्षा को अनिवार्य किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं। इस स्थिति को पूरे परिप्रेक्ष्य में देखें तो इससे बड़ा दु:ख नहीं है, क्योंकि अपने दादा, परदादा क्या कोई औपचारिक डिग्रियां धारण किए हुए थे? जवाब है नहीं। तो क्या वे दया, प्रेम, सहिष्णुता, सद्भावना, राष्ट्र प्रेम, कर्त्तव्य परायणता, भूमि महत्ता, अहिंसा आदि विशिष्ट मूल्यों से रहित थे। जवाब है नहीं। तो आज इन मूल्यों के जागरण हेतु बालक पर अतिरिक्त दबाव डालने का अर्थ क्या है?

शिक्षा चिन्तकों एवं शिक्षा नियामकों! आज का सामाजिक, वैयक्तिक, आर्थिक, शैक्षिक

वातावरण तद्नुसार नहीं है कि मूल्यों का विकास अपने परिवेश में अपने आप ही हो जाए। आज राष्ट्र को अपने पूरे परिचय को बनाए रखते हुए अपना विकास निरन्तर रखने के लिए मूल्य शिक्षा का पठन विद्यालय/कॉलेजों में अथवा आज की युवा पीढ़ी में अति आवश्यक है।

वर्तमान समय में मूल्य शिक्षा देने की आवश्यकता पर एक दृष्टि

1. भौतिक प्रगति के वर्तमान काल में शाश्वत मूल्यों को बनाए रखने हेतु मूल्य शिक्षा लागू करने की महती आवश्यकता है।
2. भौतिक वैज्ञानिक युग में सुख व समाज की संकल्पना को संजोए रखने के लिए।
3. आर्थिक पूंजीवादी दौड़ में असुरक्षित एवं असंरक्षित भविष्य को सुरक्षित एवं संरक्षित करने की दृष्टि से।
4. शिक्षक, अभिभावक, अधिकारी आदि को अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान करवाने हेतु।
5. सर्वेभन्तुसुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः सर्वेभद्राणि पश्यन्तु मा मश्चिद् दुःख भाग्भवेत् एवं सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् की भावना पुनःस्थापना करने की दृष्टि से।
6. व्यवहार की नींव को मूल्यरूपी जल के सिंचन की दृष्टि से।
7. अहंवादिता, स्वार्थपरता, निजता, एकाकी प्रवृत्ति, निहृदयता आदि भावों के समूल उन्मूलन हेतु।
8. निरन्तर विकास को प्राप्त इस धारा में संस्कारादर्शों की खाद से सक्षम, आदर्शी, संस्कारी नव पल्लवों के प्रस्फुटन के लिए।
9. इक्कीसवीं शताब्दी के आगमन में व्यावसायिक आर्थिक वादिता के युग में भौतिक विकास के साथ मूल्य विकास को भी बनाए रखने की दृष्टि से।
10. पाश्चात्यीकरण एवं आधुनिकीकरण की अन्धी दौड़ में युवाओं एवं मानवजन में विवेकी दृष्टि उत्पन्न कर बदलाव को अपनाने हेतु प्रेरित करने की दृष्टि से।
11. अनैतिकता, भ्रष्टाचार एवं विविध षड्यन्त्रों से दम तोड़ती भारतीयता को सम्बल प्रदान करने की दृष्टि से।
12. भारतीय संस्कृति, साहित्य एवं पुरा गौरव को पुनः दृष्टि पटल पर प्रस्तुत कर उसे अपनाने की दृष्टि से।
13. केवल उपभोक्ता बने भारतीयों में अथवा विश्व समुदाय में पूर्वोक्त मूल्यों के प्रति आकर्षण एवं उनके महत्व का प्रतिपादन कर अपनाने एवं अपनाकर व्यवहार में उतारने हेतु प्रेरित करने की दृष्टि से।
14. भारत तथा विश्व भविष्य को ध्यान में रखते हुए आज की युवा पीढ़ी में नैतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, साहित्यिक आदि मूल्यों को आत्मसात् करवाने की दृष्टि से।
15. साम्प्रदायिकता, अनैतिकता, आतंकवाद, दुराचारादि कार्यों के समूल समापन एवं उनके स्थान पर सर्वधर्म समभाव, नैतिकता, शान्ति एवं सदाचारादि कार्यों के विकास हेतु युवाजन को तैयार करने की दृष्टि से।
16. मानव जीवनशैली को उन्नत बनाने की दृष्टि से।
17. आधुनिकता को बढ़ावा तो देते रहें किन्तु साथ में पुरातनता के स्वीकार्य आदर्शों, संस्कारों के साथ मूल्यों का समन्वयात्मक कदमताल

करवाकर राष्ट्र को पुनः विश्वगुरु की पदवी अर्जन कराने की दृष्टि से।

18. विवेकात्मक निर्णय कर सकने में सहयोग प्रदान करने की दृष्टि से।
19. स्व-अस्तित्व को पहचान सामर्थ्यानुसार विकास का अवसर प्रदान करने की दृष्टि से।
20. रोजगार परक शिक्षा पर लगा मूल्य विहीनता का धब्बा हटाने की दृष्टि से।
21. देश के भावी नेताओं को संस्कारों, मूल्यों एवं आदर्शों से युक्त करने की दृष्टि से।
22. सामाजिक अलगाव, पारिवारिक एकाकीपन, स्वसीमित वैयक्तिकता के स्थान पर लगाव, मिलनसार प्रवृत्ति एवं सामाजिक व्यक्ति का निर्माण करने की दृष्टि से।
23. उच्च नागरिकता के साथ राष्ट्र का समग्र विकास चाहने की दृष्टि से।
24. अन्त में जन समुदाय को जीवन संग्राम हेतु प्रस्तुत करने की दृष्टि से।

सार रूप 'श्रीकान्त वर्मा' के मतानुसार- 'इतने मकान पास-पास सटे, मगर प्रेम नहीं। सुबह इन मांदों का खुलना, शाम को धीरे-धीरे बन्द होना, दिन भर आंय-आंय, यह अर्थ नही है भांय-भांय, सहमति नहीं, विश्वास नहीं, एक-दूसरे से मिलने की ललक नहीं।।'

मानवजन में व्याप्त इस भावना के समूलोत्सर्ग करने की दृष्टि से आज मूल्य शिक्षा की महती आवश्यकता है।

निष्कर्षतः विवेकानन्द जी के शब्दों में– विदेशी भाषा में दूसरों के विचार रटकर अपने मस्तिष्क में उन्हें ठूंसकर और विश्वविद्यालयों की कुछ पद्वी प्राप्त करके हम अपने को शिक्षित समझते हैं। क्या यही शिक्षा है? हमारी शिक्षा का उद्देश्य क्या है? या तो मुंशीगिरी करना, वकालत या छोटा-मोटा अफसर हो जाना। किन्तु इससे हमें या हमारे देश को क्या लाभ?

वह शिक्षा जो जन समुदाय को जीवन संग्राम के उपयुक्त नहीं बनाती, चारित्रय शक्ति का विकास नहीं करती, जो उनमें दया का भाव जागृत नहीं करती, क्या उसे हम शिक्षा का नाम दे सकते हैं? नहीं। हमें तो ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र बने, मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और जिससे मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके। हमें आवश्यकता है विदेशी मानसिक अधिकार से स्वतंत्र रहकर, अपने निजी ज्ञान भण्डार की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन कर, दर्शाए विभिन्न मूल्यों का ज्ञान प्राप्त करें एवं उनका आत्मसात् करें।

आज आधुनिक शिक्षा संस्थाओं में अध्ययनरत विद्यार्थियों एवं जनों में सच्ची जिज्ञासा एवं श्रद्धा के भाव विनष्ट ही दिखाई देते हैं और हाँ कुछ मेधावी ज्ञानार्जन कर लेते हैं, किन्तु मस्तिष्क तो कोरा ही रहता है। उनमें विवेक नहीं। संस्कार नहीं, कोरी अर्थोपार्जक एवं भौतिकता हेतु प्रस्तुत करने वाली शिक्षा से कुछ नहीं होगा, यदि आज सही मायनों में राष्ट्र के नागरिकों एवं युवाओं को चरित्रवान, मानसिक शक्तियुक्त, सक्षम जीवन जीने हेतु प्रस्तुत करना है एवं राष्ट्र को विश्वगुरु की पदवी पुनः अर्जित करवानी है तो मूल्य शिक्षा देने की नितान्त आवश्यकता ही नहीं अपितु अनिवार्यता है। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में एक बार पुनः –

"उतिष्ठत्! जागृतप्राप्य वरान्निबोधयत्।।[3]

संदर्भ

1. राजीवन, आर.श्री. 1988. *भारतीय जीवन मूल्यों के अनुरूप शिक्षा*, शिक्षांक कल्याण, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ.सं. 162.
2. द्विवेदी, कपिल देव. 1996. *शिक्षा मनोविज्ञान विषयक निबन्ध*, 'संस्कृत निबन्ध शतकम्' में प्रकाशित. विश्वविद्यालय प्रकाशन. वाराणसी, पृ.सं. 253.
3. स्वामी, अपूर्वानंद. 2006. *स्वामी विवेकानंद की संक्षिप्त जीवनी तथा उपदेश.* राधाकृष्ण मठ, नागपुर. पृ.सं. 90.